शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 जुलाई 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

हिंदी साहित्य और स्त्री विमर्श

डॉ.ज्योति बाला (शोधार्थी)
संस्कृत अध्यापिका
राजकीय कन्या विद्यालय
पाल्हावास, हरियाणा, भारत

शोध संक्षेप

सामाजिक गतिशीलता के अध्ययन के केंद्र में स्त्री की स्थिति को देखा-परखा जाता है। किसी भी समाज के उत्थान और पतन में स्त्रियों की दशा का आकलन किया जाता है। भारत में यह श्लोक प्रसिद्ध है 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता: अर्थात जहां नारी की पूजा होती है, वहां ईश्वर का वास होता है, परन्तु सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक दृष्टि से विश्लेषण करने पर स्थिति ठीक उलट दिखाई देती है। यद्यपि स्त्री-विमर्श की शुरुआत पश्चिमी देशों से हुई, परन्तु भारतीय साहित्य में सदैव स्त्री को केंद्र में रखकर विचार-विमर्श किया जाता रहा है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक चर्चा की निरंतरता बनी हुई है। प्रस्तुत शोध पत्र में हिंदी साहित्य और स्त्री विमर्श पर विचार किया गया है।

भूमिका

प्राचीन भारतीय वाड्मय से लेकर आज तक स्त्री विमर्श किसी-न-किसी रूप में विचारणीय रहा है। स्त्री- विमर्श के अन्तर्गत स्त्री की पूरी बनावट, उसके जातीय संस्कार तथा जीवन से उसका संपर्क बिंदु सब कुछ आ जाता है। दुनिया का सबसे शक्तिशाली नियम आकर्षण का नियम है, जिसमें स्त्री-पुरुष एक-दूसरे से प्रभावित होकर एक साथ जीवन जीते हैं तथा बँधनों में बंधे रहते हैं, लेकिन मानसिक स्तर पर अनेक ऐसे प्रश्न एवं दुविधाएँ होती हैं जिनका हल ढूँढना संभव नहीं हो पाता। जहाँ तक साहित्य में नारी विमर्श की बात है, तो बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से हमारे देश में जो नारीवादी आंदोलन आरंभ हुए, उन आंदोलनों से भारतीय साहित्य काफी प्रभावित हुआ है। इसकी पृष्ठभूमि के रूप में यूरोप और अमेरिका की जिस नारीवादी विचारधारा के प्रभाव के कारण ऐसा हुआ है, वह पाश्चात्य देशों के नारीवादी विमर्श की देन है। यह स्वीकार करने के बावजूद कहा जा सकता है कि स्त्री विमर्श कभी तो संसार की समस्त स्त्रियों द्वारा समस्त पुरुषों का विरोध करने वाली विचारधारा के रूप में सामने आया तो कभी यह स्त्री की उन्मुक्त सेक्स की वकालत करने वाले साहित्य के रूप में सामने आया।

हिंदी साहित्य और स्त्री-विमर्श

स्त्री विमर्श हिंदी साहित्य का एक ज्वलन्त प्रश्न है जो देश की आधी जनसंख्या से सम्बन्धित है:

"संसार, समाज, सारा जहाँ चीर हरे नारी का
सब हरें यों सोंचे, तुच्छ समझ के चाहे यही।
न बने श्रीकृष्ण कोई, बने सब कौरव दुर्योधन।
अज्ञात अबला समझ-समझ के, खेलवाड करे सारी सृष्टि।

ऐ नारी, तुम क्या जानो
नारी किस पदार्थ का नाम है।
इसमें क्या बस-बस करती

इनका आंतरिक रूप क्या है ?
तुमने बस इतना जाना
पुरुष मेरा ईश्वर खुदा है।
कर्तव्य सीखा सेवा, गुलामी
दमन की तू पुजारी है"।।1.

स्त्रियों की वेदना ही स्त्री विमर्श की जन्मदात्री है। यह वेदना साहित्य की ही नहीं बल्कि पूरे समाज की स्त्रियों की वेदना है। जरूरत है समाज को बदलने की जो स्त्रियों की इस वेदना को समझ सके। यद्यपि साहित्य स्त्री विमर्श के माध्यम से स्त्री उत्थान काफी कठोर संघर्ष की माँग करता है, फिर भी हिंदी साहित्य कविता, कहानी, उपन्यास और आत्मकथा के माध्यम से स्त्री विमर्श को अंकन किया है, जिन्हें पढ़कर स्त्रियों की वेदना को समझा जाए तथा समाज में स्त्रियों को पुरुषों के समान भागीदारी दी जाए।

यदि भारतीय इतिहास पर दृष्टिपात किया जाए तो वैदिक काल से लेकर आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल, आधुनिक काल में हिंदी साहित्य समाहित हो जाता है।

वैदिक काल में महाराज मनु ने स्त्री को पुरुष के द्वारा रक्षित बनाकर कहा है :

'पिता रक्षति कौमारे, भर्ता रक्षति यौवने
पुत्रश्च स्थविरे भावे न स्त्री स्वतन्त्रामर्हति।'2.

अर्थात् स्त्री बचपन में पिता, युवावस्था में पति तथा बुढ़ापे में पुत्र द्वारा रक्षित होती है।

आचार्य शंकराचार्य ने तो स्त्री को नरक का द्वार ही कह डाला :

"द्वारस्ति नरकस्य नारी"3.

ऐसे समय में.कृष्ण भक्त मीराबाई का पितृसत्तात्मक समाज के विरुद्ध जाकर अपनी निजता के अनुरूप जीवन-यापन करना बहुत आश्चर्य की बात थी, क्योंकि तुलसीदास जी ने स्त्रियों को पराधीन मानते हुए उन्हें पशुओं की तरह ताड़ने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। शायद ही ऐसा कोमल हृदय तथा कोमल धारणा स्त्रियों के प्रति किसी अन्य कवि की रही होगी ?

रीतिकाल में स्त्री को केवल भोग की ही वस्तु समझा जाता था।

रीतिकाल में कवियों ने नारी के उद्गार वासनात्मक तो प्रकट किए ही हैं। साथ ही विभिन्न जातियों की नायिकाओं का वर्गीकरण भी किया है। जिसके कारण साहित्य में पहली बार मध्य व निम्न वर्ग की कामकाजी स्त्रियों को महत्व मिला है।

मध्य युग में तो स्त्री पति के हाथों की कठपुतली बनकर रह गई थी। स्त्रियों को रीतिकाल में आदर नहीं मिला था। स्त्रियाँ सती प्रथा, बालविवाह, बहुपत्नी प्रथा, पर्दा प्रथा, अशिक्षा, कन्या वध जैसी कठिनाइयों से जूझती रहीं, लेकिन सामाजिक स्तर पर स्त्री के सुधार के प्रयास इस काल से ही होने लगे। 19वीं शताब्दी में स्त्रियों की दयनीय स्थिति को ऊपर उठाने के लिए राजा राम मोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द आदि ने भरसक प्रयास किए।

आधुनिक काल की बात करें तो स्त्री शिक्षित है। शिक्षित कामकाजी अधिकारों के प्रति सजग तथा आर्थिक रूप से स्वतन्त्र है, परंतु कहीं न कहीं वह मानसिक घुटन को अपने अंदर महसूस करती है। पुरुष प्रधान समाज ने कभी सोचा भी नहीं था कि उसका अनुगमन करने वाली स्त्री एक दिन लॉ क्लासेज चलाएगी, नारीवादी नारे लगाएगी तथा अन्तरिक्ष में जाएगी। पुरुष का परंपरागत मन स्त्री के अधिकारों को स्वीकार नहीं कर पाता। स्त्री का सजग होना उसे स्वीकार नहीं है। वह आज भी स्त्री में परंपरागत कुल लक्ष्मी वाले स्वरूप को ही ढूढ़ँता है।

नारी विमर्श को आधुनिक काल में कविता, उपन्यास एवं कहानी में व्यापक तौर पर देखा जा सकता है। आधुनिक काल के साहित्य में स्त्री विमर्श के माध्यम से स्त्री उत्थान की संरचना काफी कठोर संघर्ष की माँग करती है तथा अपने अंदर एक प्रश्न करती है। द्विवेदी जी ने नारी के पक्ष का समर्थन करते हुए लिखा है :

"पति को देवतुल्य हम माने,
बच्चों की भी दासी हैं।
सेवा सदा करे नहि सोचे
भूखी हैं या प्यासी हैं।।
हे भगवान! हाय तिस पर भी
उपेक्षा कैसी पाती है।
शेष तुल्य ताड़न अधिकारी
हम बनाई जाती हैं।।"4.

आधुनिक युग के कुछ कवियों में नए क्षितिज के कुछ आभास मिलते हैं। डॉ. गोपालशरण सिंह की 'मानवी', रामनरेश त्रिपाठी के 'मिलन', 'पथिक' आदि काव्यों में इसका संकेत मिलता है। कुमारी 'मधु' के एक गीत की इन पंक्तियों में इस नवीन विचारधारा का समर्थन नारी की ओर से मिलता है :

"एक तुम्हारे ही परिचय की सीमा में बँधकर रहूं,
इतनी लघुता का वरदान न आज मुझे स्वीकार है।
मेरे पैरों में जंजीर न बाँधो तुम अपने अधिकार,
विहंगी की उन्मुक्त गगन में उड़ने की अभिलाषा है।"5.

वास्तव में साहित्य और समाज दोनों में ही स्त्री की जीवन की समस्याओं को दर्शाया गया है। साहित्य में नारी की ममता तथा कर्त्तव्यनिष्ठा एवं समर्पण को विभिन्न रूपों में, जिस प्रकार का स्त्री विमर्श पाश्चात्य साहित्य में 60-70 के दशक में देखा जाता है, लगभग उसी से मिलता-जुलता स्त्री विमर्श भारतीय साहित्य में मिलता है।

भारत में 'सीमांतनी उपदेश' नामक पुस्तक 'जिसे एक अज्ञात हिंदू औरत ने 125 वर्ष पहले लिखा था, उसे 1862 ई. में धर्मवीर भारती ने संपादित किया था।"6. इसमें स्त्री को पुरुष के विरुद्ध नहीं खड़ा किया है, बल्कि पुरुष के सहयोग से स्वस्थ समाज का निर्माण करने के लिए प्रेरित किया गया है।

महादेवी वर्मा द्वारा रचित 'श्रृंखला की कड़ियाँ" जिसकी रचना सन् 1914 ई. में हुई थी। इसमें इन्होंने स्पष्ट किया है कि स्त्री को केवल रमणीय भार्या ही नहीं बल्कि उसके पत्नीत्व, मातृत्व का भी सम्मान करना चाहिए।"7.

मृणाल पांडे ने भी अपनी पुस्तकों में ग्रामीण एवं शहरी, घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के दुःख दर्द को प्रभावशाली ढंग से रेखांकित तो किया ही है, साथ ही सम्यक् दृष्टिकोण को विकसित भी किया है।

सन् 1975 ई. में क्षमा शर्मा ने 'स्त्री का समय' पुस्तक में कई महत्त्वपूर्ण मुद्दों को भी उठाया तथा कहा कि घरेलू स्त्रियों को भी एक साप्ताहिक अवकाश अवश्य मिलना चाहिए।"8

हिंदी के आरंभिक उपन्यासों का उद्भव स्त्री-चेतना से ही हुआ है। हिंदी में उपन्यास की रचना का उद्भव स्त्री शिक्षा के लिए ही हुआ है। 'देवरानी जेठानी की कहानी', 'वामा शिक्षक', 'भाग्यवती' आदि उपन्यासों में स्त्री चेतना ही मूलाधार है।

1960 के दशक में उषा प्रियवंदा द्वारा लिखे गए उपन्यास 'रूकोगी नहीं राधिका' के द्वारा नारी की नई पहचान को प्रस्तुत किया गया। उस दौर में इस उपन्यास की पात्र राधिका को समझने के लिए आम साहित्यकार को पाठक से अलग हटकर सोचना पड़ा। लोगों ने समाज में किसी भी

ऐसी नारी की कल्पना नहीं की जो स्वयं अपने लिए जीवन साथी की तलाश करे।

राजी सेठ का उपन्यास 'मैं तो जन्मा ही' में भी उसकी नारी पात्र स्वयं को अचंभित मानती हैं कि उसे शादी करके अपना परिवार बसाना है, यही उसके जीवन का उद्देश्य है।

मंजुल भगत की 'अनारो' निम्नवर्ग की मेहनतकश महिला है, जो अपने मान-सम्मान के लिए कुछ भी कर गुजरने को तैयार रहती है। वह अपने मूल्यों से समझौता करती नहीं दिखती हैं।

मैत्रेयी पुष्पा की 'अल्मा कबूतरी' कुछ इसी तरह की पात्र है, जो अपने जीवन में अपमान सहने के बाद भी समाज से टकराने का साहस करती है। उसकी जीवंतता के कारण नारी चेतना जागृत होती दिखाई देती है।

एक स्तर पर यह विमर्श हिंदी उपन्यासों में चित्रित स्त्री के जीवन पर केंद्रित है, जो स्त्री की दशा में सुधार, स्त्री सबलीकरण, स्त्री मुक्ति तथा स्त्रीवाद के रूप में है, वहीं दूसरी और महिला लेखन के संदर्भ में स्त्री अनुभव, स्त्री चेतना और स्त्री स्वतंत्रता की मांग के रूप में सामने आता है। इस समय के रचनाकारों ने अपने उपन्यासों में ऐसे पात्रों को सामने रखा है, जिनके द्वारा नारी चेतना जागृत होती दिखाई देती है।

नारी सशक्तिकरण के जो प्रश्न समाज में प्रकट हो रहे हैं, उससे स्त्रियों के जीवन-यापन के ढंग भी बदल रहे हैं। आज साहित्य में भी महिला आंदोलन द्वारा उठाए गए मुद्दे प्रमुखता से उभर रहे हैं। ऐसे अनेक पुरुष एवं महिला कहानीकार हैं, जिनमें राजी सेठ, ममता कालिया, एस. आर. हरनोट, मोहनदास नैमिषारण्य, इंदिरा राय, जया जादवानी, नमिता सिंह, सुधा अरोड़ा, सुषम बेदी, क्षमा शर्मा, मैत्रेयी पुष्पा, सूर्यबाला, प्रभा खेतान, चित्रा मुद्गल आदि हैं। इन्होंने अपनी कहानियों में नारी को केंद्र में रखकर उसके प्रति कलम चलाई है।

राजी सेठ की 'यह कहानी नहीं' नामक कहानी संग्रह में 10 कहानियाँ हैं जिनमें पुरुष नारी के संबंधों का सूक्ष्म चित्रण किया गया है।

उज्ज्वल भट्टाचार्य ने अपनी 'परिवार' नामक कहानी में एक परिवार का चित्रण किया है जिसमें माँ-बाप, बेटी-बेटा के संबंधों के माध्यम से सच्चे परिवार का उल्लेख किया गया है।

कमलेश्वर की एक कहानी पर शिवेंद्र सिन्हा ने 'फिर भी' नामक फिल्म बनाई थी। इसमें अपने स्वर्गीय पिता के स्नेह से ग्रस्त नायिका न अपने प्रेमी को स्वीकार कर पाती है और न ही अपने माँ, मित्र तथा प्रेमी को। इस संसार में कोई पुरुष संपूर्ण नहीं होता, पूरा सुख किसी को भी नहीं मिलता, आधा सुख मिलता है आधे की कल्पना करनी पड़ती है, अगर आज की नारी आधे सुख की कल्पना भी कर ले तो यह समाज उसकी विशिष्टता को खंडित नहीं कर सकता।

श्योराज सिंह बेचैन की कहानी 'शोध प्रबंध' में लेखक ने अपने ऊपर हुए अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने की प्रेरणा दी है। इस कहानी की नायिका रीना अपने ऊपर यौन शोषण करने वाले गाइड प्रो. सिंह के विरुद्ध खड़ी होती है।

रामधारी सिंह दिनकर की 'चोर दरवाजा' कहानी की बडकी समाज सेविका के रूप में चित्रित की गई है। इनकी एक अन्य कहानी 'जहाँ जोत बरय दिन राती' कहानी की कुसुमा भी सेवा परायण तथा त्यागमयी नारी के रूप में चित्रित की हुई है और आदर्श पति परायण, सेवा परायण नारी की परोपकारिता का आदर्श प्रस्थापित करती है ? जैसेः- लोग कहते हैं "लंगड़ू भजंत्री अब सिर्फ अपनी घरवाली के लिए गाता है।"9.

समकालीन कथा लेखिका कृष्णा सोबती का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। हिंदी कथा साहित्य में नारी के विविध अन्तर्द्वन्द्वों, कुंठाओं, वर्जनाओं तथा पीड़ा की स्वाभाविक अभिव्यक्ति हुई है।

इन्होंने अपनी कहानियों में स्त्रियों के जीवन को ऐसे प्रस्तुत किया है, जैसे वह परिस्थितियों से समझौता करती है, बाद में उसे भाग्य समझकर घुटने टेक देती है।

सुधा अरोड़ा की कहानी 'रहोगी तुम वही' की नारी उच्च शिक्षित होकर भी वह पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था की गुलाम बनी हुई है। पहले जमाने में स्त्रियों के घरेलू काम थे उल्टे आज के जमाने में स्त्रियों को बच्चों का ट्यूशन खुद लेना, उनके भविष्य की ओर ध्यान देना आदि काम बढ़े हैं जैसे : अब मुझसे उम्मीद मत करो कि मैं थका माँदा लौटकर बच्चों को गणित पढ़ाने बैठूँगा, एम.ए. की गोल्ड मैडलिस्ट हो, तुमसे अपने ही बच्चों को पढ़ाया नहीं जाता ?"10.

स्त्री विमर्श साहित्य के रूप में देखें तो साहित्य मानव चेतना की अभिव्यक्ति करता है। महिला साहित्यकारों से यह भी अपेक्षा रहती है कि वह पुरुष सत्तात्मक समाज को बदलने में अपनी भूमिका निभाए।

जया जादवानी का रचना संसार नारी को केंद्र में रखकर उसके इर्द-गिर्द फैला हुआ है। एक ओर वह पुराने संस्कारों में लिपटी हुई है तथा दूसरी ओर आधुनिकता को स्वीकार करके स्वच्छंदता पूर्ण जीवन जीने वाली नारी है।

निष्कर्ष

वास्तव में साहित्य और समाज दोनों में ही स्त्री जीवन की समस्याओं को दर्शाया गया है। साहित्य में नारी की ममता तथा कर्त्तव्यनिष्ठा एवं समर्पण को विभिन्न रूपों में प्रदर्शित किया है। नारी को बार-बार अविश्वास की परीक्षा से गुजरना पड़ता है। स्त्री सशक्तिकरण के जो प्रश्न समाज में प्रकट हो रहे हैं, उससे स्त्रियों के जीवन-यापन के ढंग भी बदल रहे हैं। इसलिए साहित्य स्त्री विमर्श के माध्यम से संदेश दे रहा है।

संदर्भ ग्रंथ

1 नारी की दास्तान, मुन्ना पटेल, मुन्ना पब्लिकेशन्स 37, मुन्ना पब्लिकेशन्स 37/657 सागर बिल्डिंग, आजाद नगर, नं. 2 वीरा देसाई रोड अंधेरी वेस्ट मुंबई-53, सं.- अप्रैल 2004

2 मनुस्मृति 9/3 अध्याय 3, पृष्ठ 479, मनोज पब्लिकेशन, नई दिल्ली सं.-2003

3 कल्याण, नारी अंक पृष्ठ 128, राधेश्याम खेमका, गीताप्रेस गोरखपुर संवत - 2061

4 रसज्ञ रंजन, महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ 60, साहित्य रत्न भंडार, आगरा, संवत 1920

5 सम्मेलन, डॉ.रामानन्द तिवारी, काव्य में नारी के रूप (लेख) पृष्ठ 45, सं. - शक् सम्वत् आषाढ मास 1882.

6 सीमान्तनी उपदेश - (भूमिका), धर्मवीर भारती, पृष्ठ 10 वाणी प्रकाशन, मेघा बुक्स, नई दिल्ली, सं. 1998.

7 श्रृंखला की कड़ियाँ, महादेवी वर्मा, पृष्ठ 21, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं. - 2008.

8 समकालीन हिंदी पत्रकारिता में नारी संदर्भ, रमेशचन्द्र त्रिपाठी, पृष्ठ 24, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - 110002 सं. अप्रैल 2007.

9. बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक की कहानियों में नारी, डॉ. बदन, पृष्ठ 52, विकास प्रकाशन, कानपुर सं.- 2008.

10 हंस पत्रिका, राजेन्द्र यादव, पृष्ठ 15, अक्षर प्रकाशन, प्रा. लि., नई दिल्ली - 110092, मई - 1999